नईदुनिया

संपादकीय

डे-केयर सेंटर बनें टॉर्चर सेल

डर का घर, मासूमों पर जुल्म की हद

हे राम! *इतनी अमानवीयता। यह शब्द नहीं, चीख है जो बेंगलुरु के कैपजेमिनी एचएएल कैंपस स्थित डे-केयर सेंटर से उठी है। दो से तीन साल के मासूम बच्चे, जिनकी तोतली बोली पर मां-बाप फिदा होते हैं, उन पर जो गुजरी, उसे देखकर रूह कांप जाती है। 29 जून को सोशल मीडिया पर वायरल हुए वीडियो किसी थ्रिलर फिल्म के दृश्य नहीं, बल्कि आईटी राजधानी की चमक के पीछे छिपी भयावह सच्चाई हैं। एक वीडियो में बच्चा टॉयलेट में बंद होकर बिलख रहा है और केयरगिवर उसका वीडियो बना रही है। दूसरे में बच्चे के चेहरे पर जेट स्प्रे से पानी मारा जा रहा है। एक मासूम को वॉशिंग मशीन के ड्रम में बैठाकर डराया जा रहा है। यह खेल नहीं, यातना है; यह बाल उत्पीड़न की भयावह तस्वीर है।*

सवाल यह है कि इन बच्चों का कसूर क्या था? रोना क्या गुनाह है? जिद करना क्या अपराध है? अगर दो साल का बच्चा रोएगा नहीं तो क्या इस्तीफा लिखेगा? यह सब एक बहुराष्ट्रीय कंपनी के कैंपस में हो रहा था, जहां कर्मचारी कल्याण के बड़े-बड़े दावे किए जाते हैं। पुलिस ने पांच महिला केयरगिवर्स के खिलाफ मामला दर्ज किया है, लेकिन सवाल केवल पांच लोगों पर नहीं, पूरे सिस्टम पर है। एक पूर्व कर्मचारी ने पहले ही प्रबंधन को इसकी जानकारी दी थी, लेकिन कार्रवाई करने के बजाय उसे नौकरी से निकाल दिया गया। यह अमानवीयता की दूसरी परत है।

नोएडा, गुरुग्राम, पुणे और अन्य शहरों से भी डे-केयर में बच्चों के साथ मारपीट की खबरें आती रही हैं। मां-बाप मजबूरी में बच्चों को डे-केयर में छोड़ते हैं और भरोसा करते हैं कि उनका बच्चा सुरक्षित रहेगा। लेकिन जब रखवाले ही दरिंदे बन जाएं तो भरोसा किस पर किया जाए? जुवेनाइल जस्टिस एक्ट, 2015 की धारा 75 बच्चों के साथ क्रूरता पर कठोर सजा का प्रावधान करती है, लेकिन सवाल केवल सजा का नहीं, रोकथाम का है।

क्या हर डे-केयर में अभिभावकों को सीसीटीवी का लाइव एक्सेस मिलता है? क्या महिला एवं बाल विकास विभाग नियमित निरीक्षण करता है? क्या केयरगिवर्स का पुलिस सत्यापन और मनोवैज्ञानिक परीक्षण अनिवार्य है? यदि नहीं, तो ऐसी घटनाएं कैसे रुकेंगी? डे-केयर आज सेवा से अधिक व्यवसाय बन चुके हैं। सीमित जगह में जरूरत से ज्यादा बच्चों को रखा जाता है, कम वेतन और बिना प्रशिक्षण वाले कर्मचारियों से संवेदनशील जिम्मेदारी निभाने की उम्मीद की जाती है। ऐसे में सबसे ज्यादा नुकसान उस बच्चे को होता है, जो अपनी पीड़ा कह भी नहीं सकता।

यह मामला केवल कैपजेमिनी का नहीं, बल्कि उस सोच का है, जहां बच्चे को जिम्मेदारी नहीं, बोझ समझा जाता है। दोषियों पर त्वरित सुनवाई हो, कंपनी की जवाबदेही भी तय हो और डे-केयर सेंटरों के लिए सख्त नियमन लागू किया जाए। अभिभावकों को भी केवल सुविधाएं नहीं, सुरक्षा व्यवस्था, स्टाफ और निगरानी प्रणाली की जानकारी अवश्य लेनी चाहिए।

यह घटना समाज के मुंह पर तमाचा है। हम तकनीक में आगे बढ़ रहे हैं, लेकिन मासूम बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित नहीं कर पा रहे। यदि अब भी नहीं चेते तो भरोसा, संवेदना और इंसानियत-तीनों हार जाएंगे। बेंगलुरु की यह घटना पूरे देश के लिए चेतावनी है कि डे-केयर के नाम पर चल रहे ऐसे यातना गृहों पर तत्काल लगाम लगाई जाए, क्योंकि जो समाज अपने बच्चों की रक्षा नहीं कर सकता, वह सच्ची तरक्की का दावा भी नहीं कर सकता।

आजकल

पेट भरना नहीं मन भरना सीखिए

माइंडफुल ईटिंग बनेगी सेहत की चाबी

आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में भोजन केवल पेट भरने का माध्यम बनकर रह गया है। थाली सामने होती है, लेकिन ध्यान मोबाइल, टीवी या काम की चिंताओं में उलझा रहता है। यही आदत माइंडलेस ईटिंग कहलाती है, जो मोटापा, मधुमेह, अपच, गैस और हृदय रोग जैसी समस्याओं की बड़ी वजह बन रही है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे के अनुसार भारत में हर चौथा व्यक्ति अधिक वजन का शिकार है। शहरी क्षेत्रों में यह आंकड़ा 35 प्रतिशत तक पहुंच चुका है। विशेषज्ञों का कहना है कि तृप्ति का संकेत मस्तिष्क तक पहुंचने में लगभग 20 मिनट लगते हैं, जबकि अधिकांश लोग कुछ ही मिनटों में भोजन खत्म कर देते हैं। परिणामस्वरूप शरीर की जरूरत से अधिक कैलोरी ग्रहण हो जाती है और धीरे-धीरे वजन बढ़ने लगता है।

माइंडफुल ईटिंग किसी विशेष डाइट का नाम नहीं, बल्कि पूरे ध्यान और संतुलन के साथ भोजन करने की आदत है। हर कौर को अच्छी तरह चबाएं, भोजन के स्वाद, सुगंध और बनावट को महसूस करें। खाते समय मोबाइल और टीवी से दूरी रखें और बीच-बीच में खुद से पूछें कि क्या वास्तव में अभी भी भूख है।

इस सरल आदत से कैलोरी का सेवन कम होता है, पाचन बेहतर रहता है और मानसिक तनाव भी घटता है। भोजन शुरू करने से पहले दो गहरी सांस लें, थाली में उतना ही परोसें जितना खाना हो और पेट लगभग 80 प्रतिशत भरने पर रुक जाएं। यदि दोबारा भूख लगे तो कुछ मिनट रुककर पानी पिएं, फिर निर्णय लें। अधिक खाना पेट की नहीं, मन की आदत है। जब हम भोजन को केवल स्वाद नहीं, बल्कि स्वास्थ्य का आधार मानेंगे, तब शरीर भी स्वस्थ रहेगा और मन भी संतुष्ट होगा। इसलिए आज से संकल्प लें कि हर कौर पूरी सजगता के साथ खाएंगे, क्योंकि अच्छी सेहत की शुरुआत सही खानपान और स्वयं की सुनने की आदत से होती है।

एक देश, एक कानून की राह में पहचान का सवाल

मतांतरित आदिवासियों को यूसीसी से बाहर रखने की मांग ने छेड़ी नई बहस

मध्य प्रदेश में समान नागरिक संहिता (यूसीसी) विधेयक 20 जुलाई से प्रारंभ हो रहे विधानसभा के मानसून सत्र में प्रस्तुत किया जाएगा। इसमें आदिवासियों के साथ-साथ मतांतरित आदिवासियों को भी कानून के दायरे से बाहर रखा जा सकता है। इस विषय को लेकर सर्वोच्च न्यायालय की पूर्व न्यायाधीश रंजना प्रकाश देसाई की अध्यक्षता वाली समिति को जन-परामर्श के दौरान बड़ी संख्या में सुझाव मिले हैं।

एक पक्ष का तर्क है कि जब कोई आदिवासी मतांतरित हो गया, तो उसे आदिवासियों को मिलने वाले विशेष अधिकारों और सुविधाओं से वंचित रखा जाना चाहिए। सैद्धांतिक रूप से सभी व्यवस्थाओं का कानूनी अध्ययन कर समिति सरकार को अपनी अनुशंसा देगी। समिति ने इस विषय पर विस्तृत विचार-विमर्श किया है और कानूनी पहलुओं का भी अध्ययन किया है।

दरअसल, समान नागरिक संहिता का उद्देश्य सभी धर्मों के नागरिकों पर समान रूप से लागू होने वाला पारिवारिक कानून बनाना है। वर्तमान में यह गोवा और उत्तराखंड में लागू है। गोवा में पुर्तगाली शासन के समय से ही समान पारिवारिक कानून प्रभावी है, जो विवाह, तलाक, उत्तराधिकार और संपत्ति जैसे मामलों में सभी धर्मों के नागरिकों पर समान रूप से लागू होता है।

समिति को प्रदेश भर से हजारों सुझाव मिले हैं। इनमें सबसे अधिक मांग आदिवासी समाज को यूसीसी से बाहर रखने की है। तर्क दिया गया है कि संविधान की पांचवीं और छठी अनुसूची आदिवासी समाज को विशेष दर्जा देती है। उनकी अपनी परंपराएं, रूढ़ियां और स्वशासी व्यवस्थाएं हैं। विवाह, तलाक, उत्तराधिकार और संपत्ति के मामलों में उनकी अपनी व्यवस्थाएं सदियों से चली आ रही हैं। यदि समान नागरिक संहिता लागू होती है, तो उनकी सांस्कृतिक पहचान प्रभावित हो सकती है।

अब नया सवाल मतांतरित आदिवासियों को लेकर उठा है। कई संगठनों का कहना है कि जो व्यक्ति ईसाई, इस्लाम या किसी अन्य धर्म को अपना लेता है, वह सांस्कृतिक रूप से आदिवासी ही रहता है। उसकी भाषा, रहन-सहन और सामुदायिक संबंध वही रहते हैं। केवल धर्म बदलने से उसकी आदिवासी पहचान समाप्त नहीं होती। इसलिए उसे भी यूसीसी से बाहर रखा जाना चाहिए।

दूसरी ओर कुछ संगठनों का तर्क है कि जब कोई व्यक्ति स्वेच्छा से धर्म परिवर्तन करता है, तो वह उस धर्म के पर्सनल लॉ को भी स्वीकार करता है। ऐसे में उसे आदिवासी दर्जे के विशेष अधिकार नहीं मिलने चाहिए, क्योंकि इससे दोहरा लाभ मिलेगा। एक ओर वह नए धर्म की व्यवस्था का लाभ लेगा और दूसरी ओर आदिवासी आरक्षण तथा अन्य छूट भी प्राप्त करेगा। संविधान का अनुच्छेद 44 राज्य को समान नागरिक संहिता बनाने का निर्देश देता है, जबकि अनुच्छेद 29 और 30 अल्पसंख्यकों को अपनी संस्कृति और शैक्षणिक अधिकारों की रक्षा का अधिकार देते हैं। वहीं, पांचवीं अनुसूची के तहत राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वे किसी कानून को आदिवासी क्षेत्रों में लागू होने से रोक सकते हैं। सर्वोच्च न्यायालय भी कई बार कह चुका है कि आदिवासी रीति-रिवाजों को कानून से संरक्षण मिलना चाहिए।

मतांतरण के बाद आदिवासी दर्जे पर सर्वोच्च न्यायालय का रुख भी महत्वपूर्ण है। 2004 के एक निर्णय में न्यायालय ने कहा था कि केवल धर्म बदलने से व्यक्ति की जनजातीय पहचान समाप्त नहीं होती, जब तक वह अपनी जनजातीय परंपराओं को न छोड़ दे। लेकिन यदि वह नए धर्म की परंपराओं को पूरी तरह अपना ले और अपनी पुरानी परंपराओं से नाता तोड़ ले, तो स्थिति अलग हो सकती है।

समस्या यह है कि जमीनी स्तर पर मतांतरण का स्वरूप एक जैसा नहीं है। कहीं पूरा गांव धर्म बदल लेता है, लेकिन सरहुल और करम जैसे पारंपरिक त्योहार मनाता रहता है। कहीं व्यक्ति केवल धर्म बदलता है, लेकिन विवाह और अन्य सामाजिक संस्कार आदिवासी रीति-रिवाजों से ही करता है। ऐसे में यह तय करना कठिन है कि किसने वास्तव में अपनी परंपरा छोड़ी और किसने नहीं।

यदि मतांतरित आदिवासियों को यूसीसी से बाहर रखा जाता है, तो भविष्य में यह मांग भी उठ सकती है कि उन्हें आरक्षण सहित अन्य सभी विशेष अधिकार भी मिलते रहें। इससे सामाजिक तनाव बढ़ सकता है। दूसरी ओर यदि उन्हें बाहर नहीं रखा जाता, तो आरोप लगेगा कि राज्य उनकी सांस्कृतिक पहचान छीन रहा है।

समाधान यह हो सकता है कि यूसीसी में आदिवासी समाज के लिए अलग अध्याय जोड़ा जाए, जिसमें उनकी परंपराओं और रूढ़ियों को मान्यता दी जाए। मतांतरण के मामलों की जांच के लिए जिला स्तर पर समिति गठित की जाए, जो यह देखे कि व्यक्ति ने वास्तव में अपनी पारंपरिक जीवनशैली छोड़ी है या नहीं। साथ ही जनजातीय सलाहकार परिषद को अधिक प्रभावी बनाया जाए और कोई भी निर्णय उसकी सहमति के बाद ही लागू किया जाए। समान नागरिक संहिता का उद्देश्य एक देश, एक कानून की व्यवस्था स्थापित करना है, लेकिन भारत विविधताओं का देश है। आदिवासी समाज की अपनी विशिष्ट पहचान है, जिसे संविधान ने संरक्षण दिया है। मतांतरित आदिवासियों का प्रश्न और भी जटिल है, क्योंकि यहां धर्म, संस्कृति और पहचान तीनों एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। सरकार को जल्दबाजी के बजाय समिति की अनुशंसाओं का इंतजार करना चाहिए और सभी पक्षों से व्यापक संवाद करना चाहिए। कानून तभी सफल होगा, जब वह थोपा हुआ नहीं, बल्कि विश्वास और सहमति के आधार पर लागू होगा। समानता का अर्थ एकरूपता नहीं, बल्कि सभी को समान अवसर देना और प्रत्येक समुदाय की पहचान का सम्मान करना है। यूसीसी की वास्तविक परीक्षा भी इसी कसौटी पर होगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

जांच अधिकारी उलझन में और व्यवस्था को बदलाव की दरकार

नए कानून की नई चुनौती

दो साल पहले देश ने आपराधिक न्याय प्रणाली को बदलने वाले तीन नए कानून—भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम—लागू किए। कहा गया था कि इन कानूनों का उद्देश्य दंड के बजाय न्याय पर अधिक जोर देना है और इससे न्यायिक प्रक्रिया अधिक प्रभावी बनेगी। लेकिन दो साल बाद स्थिति यह है कि जांच अधिकारी अभी तक नए प्रावधानों के साथ पूरी तरह सहज नहीं हो पाए हैं। यही इसकी सबसे कमजोर कड़ी भी बनती जा रही है। मौके पर वीडियो रिकॉर्डिंग और डिजिटल जब्ती अब अनिवार्य है, लेकिन नए कानूनों की असली ताकत थानों का तकनीकी ढांचा आज भी पुराने ढर्रे पर चल रहा है। डीसीपी मुख्यालय श्रद्धा तिवारी ने भी माना कि गंभीर मामलों में जरा-सी चूक पुलिस की साख पर सवाल खड़े कर देती है।

नए कानून लागू होने के दो साल बाद भी पुलिस प्रशासन आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध नहीं करा पाया है। 2024 से अब तक 19,599 ई-एफआईआर दर्ज हुई हैं। एक जुलाई से 800 टैबलेट मिलने थे, लेकिन अब तक केवल 600 ही उपलब्ध कराए गए हैं। श्रद्धा तिवारी ने बताया कि नए कानून में गवाहों के बयान और डिजिटल साक्ष्य का महत्व बढ़ गया है, लेकिन पुलिस के लिए यह एक बड़ी चुनौती है। इंटरनेट की सीमित उपलब्धता के कारण काम प्रभावित होता है। ऐसे में विवेचना अधिकारियों को अपने निजी मोबाइल फोन पर ई-साक्ष्य एप चलाकर काम करना पड़ रहा है। कुछ जांच अधिकारियों ने बताया कि डिजिटल डेटा को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक सीडी और पेन ड्राइव जैसे साधन भी उन्हें स्वयं खरीदने पड़ते हैं।

55 जिलों में केवल पांच ई-एफआईआर ही भोपाल में एफआईआर में बदली गईं। 5,843 मामलों में ही असल कायमी हो सकी। 4,290 ई-एफआईआर दर्ज की गईं, लेकिन उनमें से केवल 324 को ही एफआईआर में बदला गया।

नए कानूनों का मकसद न्याय को तेज और पारदर्शी बनाना था, लेकिन जमीन पर हालात अलग हैं। जांच अधिकारी खुद नए प्रावधानों में उलझे हुए हैं। पहले भारतीय दंड संहिता की धारा 302 याद थी, अब भारतीय न्याय संहिता की धारा 103 देखनी पड़ती है। धाराएं बदल गईं, प्रक्रिया बदल गई, लेकिन प्रशिक्षण उतना नहीं मिला जितना मिलना चाहिए था। नतीजा यह है कि एफआईआर दर्ज करने से लेकर आरोप पत्र दाखिल करने तक में देरी हो रही है।

सबसे बड़ी परेशानी डिजिटल साक्ष्य की है। नए कानून में घटनास्थल की वीडियोग्राफी, मोबाइल जब्ती की डिजिटल हैश वैल्यू और इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को मूल साक्ष्य माना गया है, लेकिन थानों में न तो पर्याप्त टैबलेट हैं, न बॉडी कैमरे और न ही डेटा स्टोरेज की समुचित सुविधा। पुलिसकर्मी अपने निजी मोबाइल से वीडियो बनाते हैं और बाद में सवाल उठता है कि साक्ष्य सुरक्षित है या नहीं।

आंकड़े बताते हैं कि 19,599 ई-एफआईआर में से केवल 5,843 में ही असल कायमी हो पाई है। यानी लगभग 70 प्रतिशत मामले अभी भी शुरुआती चरण में अटके हुए हैं। 4,290 ई-एफआईआर दर्ज हुईं, लेकिन केवल 324 को ही एफआईआर में बदला गया। यह बताता है कि डिजिटल से भौतिक प्रक्रिया में परिवर्तन ही बेहद धीमा है। वजह साफ है—जांच अधिकारी के पास न पर्याप्त टैबलेट हैं, न प्रशिक्षित स्टाफ और न ही पर्याप्त इंटरनेट सुविधा।

55 जिलों में केवल पांच ई-एफआईआर ही भोपाल में एफआईआर में बदली गईं। यह आंकड़ा दर्शाता है कि बड़े शहरों को छोड़कर बाकी जिलों में डिजिटल जांच का बुनियादी ढांचा अभी खड़ा ही नहीं हो पाया है। ग्रामीण थानों में स्थिति और भी खराब है। वहां न पर्याप्त नेटवर्क है, न नियमित बिजली और न ही आधुनिक कंप्यूटर।

कानून बदलने के साथ सबसे जरूरी था कि हर स्तर के जांच अधिकारी को नए प्रावधानों का गहन प्रशिक्षण दिया जाता, लेकिन जमीनी हकीकत यह है कि अधिकांश प्रशिक्षण केवल पीपीटी तक सीमित रहे। फील्ड में जाकर ई-साक्ष्य एप कैसे चलाना है, हैश वैल्यू कैसे निकालनी है और क्लाउड पर डेटा कैसे अपलोड करना है, यह बहुत कम अधिकारियों को आता है। नतीजा यह है कि तकनीकी त्रुटियों के कारण मजबूत मामले भी अदालत में कमजोर पड़ जाते हैं।

संसाधन उपलब्ध कराना सबसे पहली जरूरत है। हर थाने को पर्याप्त टैबलेट, बॉडी कैमरा, हाई-स्पीड इंटरनेट और सुरक्षित सर्वर उपलब्ध कराना होगा। 800 टैबलेट में से केवल 600 ही मिले हैं और वे भी जिला मुख्यालयों तक सीमित हैं। यह संख्या बढ़ाकर हर जांच अधिकारी तक पहुंचानी होगी। निरंतर प्रशिक्षण भी जरूरी है। कानून एक बार पढ़ लेने से याद नहीं होते। हर तीन महीने में रिफ्रेशर कोर्स हों, केस स्टडी के माध्यम से धाराओं का अभ्यास कराया जाए और डिजिटल टूल्स का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाए।

हर जिले में साइबर विशेषज्ञों की टीम हो, जो जांच अधिकारियों को मौके पर सहायता दे, डेटा सुरक्षित रखे और अदालत में साक्ष्य प्रस्तुत करने में सहयोग करे। ई-एफआईआर से एफआईआर में बदलने की प्रक्रिया पूरी तरह ऑनलाइन और स्वचालित हो, ताकि फाइलों के अटकने की गुंजाइश न रहे। संसाधन उपलब्ध कराने के बाद भी यदि डिजिटल साक्ष्य संग्रह में लापरवाही हो तो जिम्मेदारी तय की जाए और आवश्यक कार्रवाई भी हो।

कानून समाज की जरूरत के अनुसार बदलते हैं, लेकिन केवल किताब में धाराएं बदल देने से न्याय नहीं मिलता। न्याय तब मिलता है, जब जांच अधिकारी को नई धाराएं अच्छी तरह समझ आएं, उसके पास आवश्यक संसाधन हों, डेटा सुरक्षित रहे और वह तकनीक से डरने के बजाय उसका प्रभावी उपयोग कर सके।

नए कानूनों का उद्देश्य पीड़ित को शीघ्र न्याय दिलाना है, लेकिन जब जांच ही उलझन में फंसी हो तो न्याय कैसे मिलेगा? इसलिए व्यवस्था को भी उतनी ही तेजी से बदलना होगा, जितनी तेजी से कानून बदले हैं। भवन वही है तो कम से कम फर्नीचर तो नया होना ही चाहिए। अपने ही कानून और नियमों को समझने में परेशान जांच अधिकारियों के लिए धाराओं के साथ-साथ व्यवस्था और संसाधनों में भी बदलाव जरूरी है।

समय के साथ बदलती जरूरतों को पूरा करने से ही न्यायिक व्यवस्था को सफलता मिलेगी। यदि आज तकनीक, प्रशिक्षण और संसाधनों पर निवेश किया जाएगा तो कल अदालतों में 'तारीख पर तारीख' नहीं, बल्कि पीड़ित को समय पर न्याय मिलेगा और पुलिस की साख भी बढ़ेगी। वरना नए कानून भी पुरानी फाइलों में दबकर रह जाएंगे और जनता का भरोसा फिर टूट जाएगा। बदलाव केवल कानून में नहीं, सोच में भी चाहिए, और सोच तभी बदलेगी जब हाथ में सही औजार होगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

खगोलीय

आसमान में अद्भुत नजारा : ग्रहों के मिलन से बनेगी त्रिभुजाकार आकृति

घटनाओं का सिलसिला इस जुलाई में आसमान के शौकीनों को रोमांचित करने वाला है। 11 जुलाई को अर्धचंद्र, मंगल और प्लीएडीज़ (कृत्तिका) तारापुंज के मिलन से आकाश में एक दुर्लभ त्रिभुजाकार आकृति बनने जा रही है। यह घटना सूर्योदय से लगभग दो घंटे पहले पूर्व दिशा में नजर आएगी। चमकीले तारों के समूह प्लीएडीज़ के साथ लाल रंग का मंगल और चांद की पतली सुनहरी फांक मिलकर एक सुंदर त्रिकोण बनाएंगे। यह नजारा नंगी आंखों से साफ देखा जा सकेगा, जबकि दूरबीन से यह और अधिक स्पष्ट व सुंदर दिखाई देगा।

प्लीएडीज़ को कृत्तिका तारागुच्छ भी कहा जाता है। यह पृथ्वी के सबसे निकट और सबसे चमकीले तारों के समूहों में से एक है। भारतीय खगोल विज्ञान में इसे कृत्तिका नक्षत्र के रूप में जाना जाता है। यह वृषभ तारामंडल में स्थित है और इसमें सैकड़ों तारे हैं, हालांकि नंगी आंखों से केवल छह या सात तारे ही दिखाई देते हैं। प्राचीन काल से यह तारागुच्छ दिशासूचक और कृषि कार्यों के लिए महत्वपूर्ण माना जाता रहा है।

11 जुलाई को चंद्रमा अपनी अर्धचंद्र अवस्था में होगा और मंगल ग्रह के साथ प्लीएडीज़ के बीच से गुजरेगा। इस दौरान तीनों मिलकर आकाश में समबाहु त्रिभुज जैसी आकृति बनाएंगे। मंगल का लाल रंग, चंद्रमा की सफेद आभा और प्लीएडीज़ का नीला-सफेद प्रकाश मिलकर अद्भुत रंग-संयोजन प्रस्तुत करेंगे। खगोलविदों के अनुसार यह दृश्य लगभग दो घंटे तक दिखाई देगा और पूर्व दिशा में क्षितिज से करीब 20 डिग्री ऊपर रहेगा।

ग्रहों का यह मिलन 11 जुलाई से शुरू होकर 14 जुलाई की सुबह तक प्रभावी रहेगा। 14 जुलाई को चंद्रमा मंगल के और अधिक करीब दिखाई देगा। इसके बाद चंद्रमा आगे बढ़ जाएगा और यह युति समाप्त हो जाएगी। जुलाई के अंतिम सप्ताह में डेल्टा एक्वेरिड्स और अल्फा कैप्रीकॉर्निड्स उल्का वर्षा भी चरम पर होगी। आसमान साफ रहने पर इसे मध्यरात्रि में देखा जा सकेगा। 18 जुलाई को मंगल और प्लीएडीज़ की युति भी देखने योग्य रहेगी। जुलाई के अंतिम दिनों में पूर्णिमा के बाद 29 जुलाई को पश्चिमी दिशा में चंद्रमा का विशेष दृश्य दिखाई देगा। इस पूर्णिमा को बक मून कहा जाता है। यह नाम गर्मियों के दौरान हिरणों के नए सींग निकलने के कारण प्रचलित हुआ।

इस घटना को देखने के लिए किसी महंगे उपकरण की आवश्यकता नहीं है। सुबह लगभग चार बजे उठकर पूर्व दिशा में खुले आसमान के नीचे पहुंचें। शहर की रोशनी और प्रदूषण से दूर स्थान सबसे उपयुक्त रहेगा। मोबाइल एप की सहायता से ग्रहों की सही स्थिति का पता लगाया जा सकता है। यदि आपके पास दूरबीन या टेलीस्कोप है तो प्लीएडीज़ के अलग-अलग तारे, मंगल का लाल रंग और चंद्रमा के गड्ढे भी स्पष्ट दिखाई देंगे। फोटोग्राफी के शौकीन ट्राइपॉड पर कैमरा लगाकर लंबा एक्सपोजर देकर सुंदर चित्र ले सकते हैं।

ग्रहों की युति कोई दुर्लभ घटना नहीं होती, लेकिन हर युति अपने आप में विशेष होती है, क्योंकि ग्रहों की गति अलग-अलग होती है। चंद्रमा प्रतिदिन लगभग 13 डिग्री आगे बढ़ता है, जबकि मंगल अपनी कक्षा में अपेक्षाकृत धीमी गति से चलता है। जब ये तीनों एक साथ दिखाई देते हैं, तो खगोलविदों को ग्रहों की कक्षा, दूरी और गति का अध्ययन करने का अवसर मिलता है। प्राचीन काल में ऐसी घटनाओं के आधार पर कैलेंडर बनाए जाते थे और खेती का समय तय किया जाता था। आज भी ये घटनाएं विद्यार्थियों में विज्ञान के प्रति रुचि जगाती हैं। भारत में प्लीएडीज़ को कृत्तिका कहा गया है और इसे कार्तिकेय की छह माताओं से जोड़ा जाता है। मंगल को सेनापति और चंद्रमा को मन का कारक माना गया है। इन तीनों का मिलन शुभ संकेत माना जाता है। पुरानी मान्यताओं के अनुसार जब मंगल और चंद्रमा कृत्तिका के पास आते हैं तो अच्छी वर्षा की संभावना मानी जाती थी और किसान इसे बोवनी का संकेत समझते थे।

यह घटना स्कूलों और कॉलेजों के लिए भी सुनहरा अवसर है। विज्ञान क्लब सुबह के समय अवलोकन कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं। बच्चों को ग्रह, तारे और चंद्रमा की गति प्रत्यक्ष दिखाकर सौरमंडल को बेहतर ढंग से समझाया जा सकता है। इससे किताबी ज्ञान अनुभव में बदलता है और जिज्ञासा बढ़ती है। माता-पिता को भी बच्चों को यह अद्भुत दृश्य अवश्य दिखाना चाहिए।

आसमान देखने के लिए अंधेरी जगह चुनें, लेकिन सुरक्षा का पूरा ध्यान रखें। किसी सुनसान स्थान पर अकेले न जाएं। मच्छरों से बचाव के लिए पूरे कपड़े पहनें और ठंडी सुबह के कारण हल्के गर्म कपड़े साथ रखें। मोबाइल की टॉर्च का कम से कम उपयोग करें, क्योंकि तेज रोशनी से आंखों की अंधेरे में देखने की क्षमता प्रभावित होती है और तारे धुंधले दिखाई देने लगते हैं।

11 जुलाई की सुबह आसमान एक प्राकृतिक प्रयोगशाला बन जाएगा, जहां ग्रह, चंद्रमा और तारे मिलकर मानो ज्यामिति का पाठ पढ़ाएंगे। यह दृश्य हमें याद दिलाता है कि ब्रह्मांड कितना विशाल और सुव्यवस्थित है। हमारी पृथ्वी उस अनंत आकाश में एक छोटा-सा बिंदु मात्र है। ऐसे अवसर विज्ञान के प्रति प्रेम बढ़ाते हैं और हमें प्रकृति से जोड़ते हैं। इसलिए अलार्म लगाइए और 11 जुलाई की सुबह पूर्व दिशा में नजरें टिकाइए। जब चंद्रमा, मंगल और प्लीएडीज़ मिलकर आकाश में त्रिभुज बनाएंगे, तो वह क्षण आपकी स्मृतियों में हमेशा के लिए दर्ज हो जाएगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)